समकालीन भारतीय साहित्य : विविध विमर्श

विविध विधाओं के संदर्भ में

भाग –१

प्रधान संपादक

प्रो. सीताराम के. पवार

सह संपादक

प्रो. प्रभा भट्ट

डॉ. एल. पी. लमाणी

डॉ. शीला. चौगुले

डॉ. नीता दौलतकर

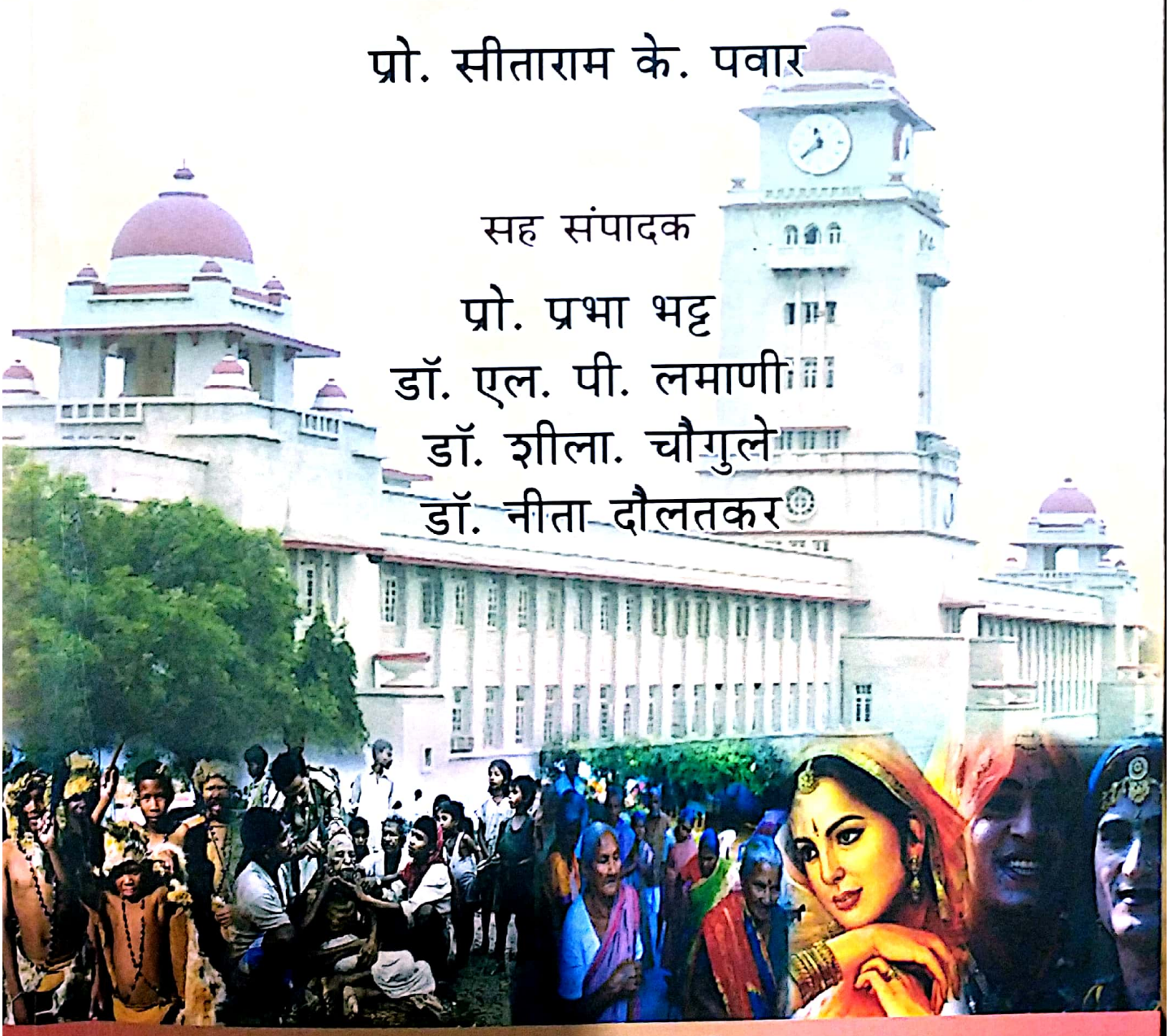

हिन्दी विभाग, कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड

Scanned with CamScanner

समकालीन हिन्दी साहित्य : विविध विमर्श

(Collective Essays Presented at International Conference on "Diverse Criticism in Contemporary Indian Literature)

प्रधान संपादक : प्रो. सीताराम के. पवार

© : प्रधान संपादक

प्रकाशक : अमन प्रकाशन कानपुर

मुद्रक : सरस्वति प्रिंटर्स, धारवाड

वर्ष : २०१८

पृष्ट : ६३१+१२

ISBN : 978-93-86604-74-3

मूल्य : ३००

प्रतियाँ : ३००

सभी हक सुरक्षित है ।

प्रस्तुत पुस्तक में प्रकाशित आलेख, विभिन्न विचार, आदि लेखक के हैं । अतः संपादक, संपादक मंडल, मुद्रक तथा प्रकाशन इसके लिए जिम्मेदार नहीं है ।

Scanned with CamScanner

24.	दलित आत्मकथाओं में चेतना	डॉ.बळीराम संगाजी मुक्तरे	81
25.	वैश्विक स्थर पर समकालीन दलित विमर्ष	डॉ.मालतेश स. बसम्मनवर	84
26.	दलित साहित्य विमर्श	डॉ. देविदास मल्लप्पा तेलंग	87
27.	हिंदी साहित्य में दलित विमर्ष	प्रा. नयन भादुले–राजमान	91
28.	दलित विमर्शा	श्रीमति कान्ती बाबुराव	93
29.	'षिंकजे का दर्द' संघर्षत दलित स्त्री की कथा	प्रा. रगडे परसराम रामजी	97
30.	मधु कांकरिया कृत 'सेज पर संस्कृत' उपन्यास में नारी	श्रीमक्ती देवकी पसन्ना.जी.एस.	101
31.	हिमांषु जोशि के कथा–साहित्य में वृद्द जनों के प्रति संवेदना	डॉ.अरूणा,	104
32.	स्त्री-विमर्श के विशेष संदर्भ में वैयक्तिक संघर्ष से 'सोशियल स्ट्रगल'तक का सफर मैत्रेयी पुष्पा का लेखन-	डॉ.गोविंद गुंडप्पा शिवशेट्ट	108
33.	मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य में स्त्री विमर्श	डॉ. रोहिणी ज. पाटील	111
34.	सुशीला टाकभौरे के कहानी संग्रह 'जरा समझो' में -दलित विमर्श	जगदीश नायक	115
35.	हिन्दी साहित्य में अविवाहित,नारीः एक अध्ययन	डॉ. के.वी.क णमोहन,	119
36.	हिंदी में दलित साहित्य का विमर्श	डॉ. बापुराव गि. पाटील	122
37.	महुए के फूलष आदिवासियों की दारुण व्यथा	डॉ. मीना जाधव	126
38.	हिंदी दलित साहित्यः एक दृष्टिक्षेप	डॉ. सदाशिव जे. पवार	129
39.	मराठी भाषिक उपेक्षित जनसमुदायों की लोकपरंपराएँ	डॉ. मिलिंद सालव	133
40.	डॉ. रमेंश चौधरी 'आरिगपूडि' जी के उपन्यासों में नारी के विविध रूप	डॉ. नारायण गुरूसिध्द बगली	137
41.	किन्नर समुदाय का सामाजिक प्रतिबिम्ब	डॉ0 राजेष स्वामी	141
42.	पुरूषी समाज व्यवस्था में नारी की उपेक्षित स्थिती	डॉ सुभाष राठोड	144
43.	आधुनिक हिन्दी साहित्य में दलित चेतना	डॉ.बी.एस्.अंडगी	147
44.	गिलिगडु में वष्ध्द जीवन	डॉ. सविता तायड	149
45.	मंजूर एहतेशाम की कहानियों में चित्रित नारी के विविध रुप	फिरोज बालसिंग	152
46.	समकालीन हिन्दी नाटकों में आदिवासी विमर्ष	प्रा.डॉ. बालाजी बळीराम गरड	155
47.	हिंदी नवजागरण और स्त्री	षिवषंकर ईष्वरकट्टी	158
48.	हिन्दी कथा साहित्य में नारी संवेदना	डॉ सुवर्ण गाड	161
49.	समकालीन लेखिकाओं की उपन्यासो में नारी चेतना	डॉ. कविता चांदगुडे	164

Scanned with CamScanner

हिंदी में दलित साहित्य का विमर्श

डॉ. बापुराव वि. पाटील

जब साहित्य का उद्‌भव हुआ उस समय साहित्य को इस प्रकार की विभागों में बाँटा नहीं गया था लेकिन जैसे-जैसे साहित्य की संख्या बढती गई वैसे-वैसे समानरूप में लिखे जानेवाले साहित्य को एक-एक विभाग में विभाजित किया जाने लगा। उसी में से विविध धाराओं का जन्म हुआ। दलित साहित्य नामक धारा का उद्‌भव कब से हुआ यह तो स्पष्ट रूप से नहीं कह सकते। लेकिन दलित शब्द का अर्थ और विकास इस पर मात्र चर्चा अवश्य की जा सकती है। जिसका वर्णन अग्ररूप में दिया जा रहा है।

दलित साहित्य क्या है? यह सवाल जितना आसान है, उसका जवाब ढूँढना उतना ही मुश्किल हैं, क्योंकि जोंही हम किसी लेखन को 'दलित साहित्य' कहना शुरु करते हैं, उसकी खास संरचनाएँ आकार ग्रहण करना शुरू कर देती है। दलित से संबंधित सभी चीजें दलित हैं अथवा दलित द्वारा रचित या व्यवहृत समस्त संरचनाएँ एवं संकेत 'दलित साहित्य' हैं। दलित समुदाय की स्थिति, समस्याएँ तथा उनके अधिकारों के संबंध में किया जानेवाला विचार ही 'दलित साहित्य' है।

हिंदी शब्दकोश के अनुसार-"विचार, विवेचन, परीक्षण, समीक्षा, तर्क आदि" अत: सोच विचार कर तथ्य या वास्तविकता का पता लगाना, किसी बात या विषय पर कुछ सोचना समझना, गुण-दोष आदि की आलोचना या मीमांसा करना, किसी से परामर्श या सलाह करना आदि।

दलित का अर्थ:

हिंदी शब्दकोश के अनुसार-"कुचला हुआ, दबाया हुआ, नष्ट किया हुआ आदि।" अत: जिसका दलन या शोषण हुआ हो, रौंदा या कुचला हुआ, अति निर्धन, कंगाल जो सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक आदि रूपों में पिछडा हुआ हो।

दलित से अभिप्राय, उन लोगों से है, जिन्हें जाति या वर्णगत भेदभाव के कारण सदियों से स्वास्थ्य एवं समुन्नत सामाजिक जीवन से वंचित, तिरस्कृत और समाज के हाशिये पर उपेक्षित जीवन जीने के लिए विवश रखा गया है। इतिहास के पन्ने को पलटने से यह साफ पता चलता है कि भारतीय सभ्यता के निर्माता वैदिक जन थे, जिनका दर्शन ब्रह्मवाद रहा, जिसके कारण दलित वर्ग सदा संघर्षशील रहे। जरूरत की बुनियादी सुविधाओं के लिए यह समाज तरसते और तडपते जीता आया। इनकी व्यथा और कथा कभी किसी ने सुनने और समझने की जरूरत महसूस

Scanned with CamScanner

नहीं की। तभी ईश्वर के वरदान स्वरूप इनके जीवन में क्रांति सूरज बनकर बाबा साहब अंबेडकर अवतरित हुए। जीवनभर गरीब, दलित, हताश तथा व्यवस्था के सताये लोगों के लिए स्वतंत्रता की सच्ची लड़ाई लड़े। बाबा साहेब अंबेडकर ने अंधविश्वास, विकृत रूढ़ि-परंपराओं, देवी-देवताओं से संबंधित आडंबरों, भाग्य, अवैज्ञानिक सोच तथा उन सभी बातों को नकारा, जो मनुष्य को बर्बरता की ओर ले जाता है लेकिन अफसोस ऐसे मसीहा, जो ईश्वर के खिलाफ रहे, आज उन्हें भगवान बनाकर, उनके तस्वीर को फूल-मालाएँ चढाकर, उनके आगे लोग भजन-कीर्तन करते हैं। वे यह नहीं सोचते, इससे बाबा साहब की आत्मा को कितनी ठेस पहुँच रही होगी। उनकी सच्ची श्रद्धांजलि तो तब होगी जब उनके वैचारिक आंदोलन की मशाल को लेकर दलित आगे बढे।

बाबा साहेब अंबेडकर दलित समुदाय की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक विफलता को संबल देने, दिल से ही नहीं, दिमाग से भी लडे। उनके द्वारा उद्घोषित सामाजिक क्रांति, जितनी भौतिक और संघर्ष की थी, उतनी ही विचारों की भी थी। शिक्षा, समता, बंधुता, स्वतंत्रता से दलितों की भावना को आंदोलित करने का श्रेय उन्हीं को जाता है। उन्हीं के प्रयास का फल है, जो आज दलित धीरे-धीरे ही सही जीवन के अंधेरे को पारकर अब प्रकाश की ओर बढ रहे हैं। बाबा साहेब का कार्य और जीवन-संघर्ष का आलेख इतना ऊँचा है कि जिससे प्रेरणा पाकर हर कोई चेतनावान हो जाता है।

यह विडंबना है कि, जो वैदिक काल में ऋग्वेद के पुरूष सूक्त से, वर्ण व्यवस्था चली, वह आज भी जारी है। जाति विशेष में जन्में लोग पूजा-स्थलों पर कुंडली मारकर बैठे हुए हैं। उनकी जाति और परिवार का आरक्षण आज भी बना हुआ है। जिसके मिटने का आसार निकट भविष्य में तो नहीं दिखता।

बाबा साहेब अंबेडकर केवल दलितों के शुभचिंतक थे, ऐसी बात नहीं है। उन्होंने समाज के उन सभी वर्गों के लिए जो दबे-कुचले, दूर-दराज में, नरक जीवन बिता रहे हैं, उन सब को समाज की मुख्यधारा में लाने के लिए पुरजोर संघर्ष किया, बावजूद ये आदिवासी, कुछ अन्य समाज सेवी के गलत बहकावे में आकर बाबा साहेब को अपना हितैषी मानने से इनकार करते हैं।

हिंदी में दलित साहित्यः

दलित साहित्य से तात्पर्य दलित जीवन और उसकी समस्याओं पर लेखन को केंद्र में रखकर हुए साहित्यिक आंदोलन से है जिसका

Scanned with CamScanner

सूत्रपाठ दलित पैंथर से माना जा सकता है। दलितों को हिंदू समाज व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर होने के कारण न्याय, शिक्षा, समानता तथा स्वतंत्रता आदि मौलिक अधिकारों से भी वंचित रखा गया। उन्हें अपने ही धर्म में अछूत या अस्पृश्य माना गया। दलित साहित्य की शुरूआत मराठी से मानी जाती है, जहाँ दलित पैंथर आंदोलन के दौरान बडी संख्या में दलित जातियों से आए रचनाकारों ने आम जनता तक अपनी भावनाओं, पीडाओं, दुखों-दर्दों को लेखों, कविताओं, निबंधों, जीवनियों, कटाक्षों, व्यंग्यों, कथाओं आदि के माध्यम से पहुंचाया।

हमारे देश में इस समय दलित, स्त्री और आदिवासी जैसे तीन विषयों का अध्ययन चल रहे हैं। इनमें सबसे जो कारगर और प्रभावशाली अध्ययन है, वह तो दलित अध्ययन ही है। वो सचमुच एक ऐसा अध्ययन है जिसकी वह वास्तविक सत्ता बन चुकी है और इस अध्ययन का महत्व भी बहुत है। इस अध्ययन ने हमारे देश में, समाज में एक ऐसे सवाल को खडा किया जिस सवाल को लेकर बडे-बडे महात्मा आज तक आते रहे और अपनी सारी सदाशयता और अपनी इच्छाओं के बावजूद कुछ नहीं कर सके। वो है जाति का सवाल। जाति का सवाल जिसको लोहिया जी कहते थे कि कोढ है इस समाज का, एक ऐसी निराधार अवधारणा है जिसका कोई आधार नहीं है, कोई विवेक सम्मत तर्क नहीं है जिसके पीछे। एक अहंकारपूर्ण मिथ्या चेतना है। लेकिन उस चेतना से प्रेरित होकर करोडों लोग अपना जीवन जीते हैं, उसमें आस्था रखते हुए और उस आस्था से प्रेरित होकर दूसरों की जान ले लेते हैं, हत्या करते हैं, हिंसा करते हैं। ऐसी निराधार विवेकहीन अहंकारपूर्ण मान्यता पर पहली बार कारगर ढंग से इस देश में सवाल खडा किया दलित साहित्य ने, जिसका श्रेय है डॉ. बाबा साहेब अंबेडकर को, महात्मा ज्योतिबा फुले और सवित्रीबाई फुले को। ज्योतिबा फुले के साथ सावित्री बाई का नाम मैं साथ-साथ लेना चाहती हूँ, क्योंकि उन्होंने जो कुछ किया, एक साथ मिलकर किया। वो सिर्फ ज्योतिबा फुले का योगदान नहीं था, उसमें सावित्रीबाई का योगदान शामिल है। इसलिए उसे स्वीकार करना चाहिए, जैसे मार्क्स-ऐंगल्स बोलते हैं, ऐसे ही ज्योतिबा फुले और सावित्रीबाई फुले जो हिंदुस्तान के मेरी नजर में पहले आधुनिक स्त्री-पुरूष थे। उनके संबंध स्त्री-पुरूषों के दृष्टिकोण से एक आदर्श संबंध थे और जब हम स्त्री-पुरूष के आधुनिक संबंधों के बारे में विचार करते हैं तो हम ज्योतिबा फुले और सावित्रीबाई फुले की मिसाल सामने रख सकते हैं।

तो दलित साहित्य ने सबसे महत्वपूर्ण काम किया कि इस देश में जाति के सवाल को इस तरह से खडा कर दिया कि उसे कोई भी नजरांदाज नहीं

Scanned with CamScanner

कर सकता। नाटक 'तृतीय रत्न' और उनकी किताब 'गुलामगिरी' ये दो किताबें ऐसी हैं, जो हमें बताती हैं कि ये जाति के आधार पर शोषण की जो प्रणाली है, जिसे ब्राह्मणवाद का नाम देते हैं।

पांडिचेरी में एक प्रोफेसर हैं मुरूशेखर साहब कई लोगों ने उनके एक नाटक की भी चर्चा की है, 'बलि का बकरा' तमिल के अच्छे लेखक हैं, नाटक लिखते हैं 'बलि का बकरा'। देवी का रथ जो खींचा जाता है वर्ष में एक बार, गांव में ब्राह्मणों के द्वारा, तो उसको खींचते हुए रस्सी टूट गयी, तो देवी को बहुत कोप आया। देवी अब श्राप देती इस गांव को। तो उससे कैसे बचा जाए? ब्राह्मणों की सभा होती है, तो उस सभा में ये तय होता है, कि देवी के कोप से बचने के लिए, देवी को प्रसन्न करने के लिए अब एक बलि उसको देनी जरूरी है। किसकी बलि दी जाए? सारे ब्राह्मण पीछे हट जाते हैं, छुप जाते हैं। अंत में एक दलित युवक को खोज लिया जाता है इस बलि के लिए। उस दलित युवक को पकड के लाया जाता है कि चलो तुमको गांव के लिए बलि होना है, तभी देवी शांत होगी। वो मजबूर आदमी, उसका अपने जीवन पर कोई अधिकार नहीं। उसकी पत्नी रोती-कलपती पीछे आती है, कि मेरे पति को छोड दो, बहुत कुछ कहती है, लेकिन ब्राह्मणों का दिल नहीं पसीजता है। लेकिन उसके पति के दिमाग में एक बात आती है वो कहता है, दलित ही की बलि देनी है न, ठीक है, ये मेरी पत्नी है, मैं बोलता हूँ इसकी बलि दे दो। मुझे जाने दो। जिस व्यक्ति का अपने जीवन पर कोई अधिकार नहीं है, वह दूसरे के जीवन पर इतना अधिकार जमा रहा है, कि उसकी बलि दे दो। ये जो दूसरा व्यक्ति है, स्त्री। इसकी आवाज हमारा दलित साहित्य उसी तरह से नहीं उठाता है। वो उसे इनकार तो नहीं करते हैं, लेकिन वो बहुत कम्फर्टेबुल भी फील नहीं करते। असुविधा महसूस करते हैं।

इसलिए ये दलित स्त्री विमर्श की आवाज उठेगी। तो दलित समाज, दलित विमर्श अगर दलित स्त्री की मुक्ति के सवाल पर नहीं सोचेगा, उस सवाल को मान्यता नहीं देगा, तो वह अपनी भी मुक्ति नहीं कर सकता। दुर्भाग्य से हिंदी दलित विमर्श में ये घटना वास्तविक रूप से घटी है कि दलित विमर्श की एक धारा, इतनी स्त्री विरोधी हो चुकी है वो धारा कि दलित समाज की मुक्ति से भी बहुत दूर हो चुकी। अंबेडकर इतने महत्वपूर्ण व्यक्ति थे; उन्होंने स्त्रियों के सवाल पर बहुत लिखा, फुले ने भी बहुत लिखा, और कइयों ने भी बहुत कुछ लिखा, मैंने किसी दलित लेखक को नहीं देखा कि उनके साहित्य का विवेचन करे स्त्री के प्रश्न पर। इसलिए स्त्रियों को यह सवाल अलग से उठाना पड रहा है। इतनी सी बातें मैं दलित साहित्य के बारे में कहना चाहता हूँ।

Scanned with CamScanner